किसानों के काम की बातें

[किसानों की हालत को सुधारने के लिये कुछ
उपयोगी बातों का संग्रह]

लेखक

रामनरेश त्रिपाठी

ग्राम-सुधार-सीरीज़

सम्पादक
रामनरेश त्रिपाठी

किसानों के काम की बातें

किसानों की हालत को सुधारने
के लिये कुछ उपयोगी
बातों का संग्रह

लेखक

रामनरेश त्रिपाठी

प्रकाशक

हिन्दी-मन्दिर

प्रयाग

पहली बार] १९३८ [मूल्य ।)

निवेदन

हिन्दुस्तान की आबादी का ज़्यादा हिस्सा गाँवों में है। इसलिये अगर हिन्दुस्तान को समझना है, तो हमको गाँवों में जाना चाहिये और अगर हिन्दुस्तान को उठाना है तो हमको सबसे पहले अपने गाँवों की ओर ध्यान देना चाहिये। अभी-तक तो हम अपने शहरों ही को सँवारने में लगे रहे, मगर थोड़े दिनों से, देश के कई हिस्सों में कांग्रेस की सरकार के आजाने से, अब हम इस बात को महसूस करने लगे हैं कि हमारे गाँव ही हमारे देश की असली सम्पत्ति हैं और उन्हींके बल पर हमारा देश अभीतक जीवित है।

कांग्रेस-सरकार की ग्राम-सुधार-योजना को ध्यान में रखते हुये, हमने एक ग्राम-सुधार-सीरीज़ निकालने का निश्चय किया है। इस सीरीज़ में २० पुस्तकें निकलेंगी। ये पुस्तकें मामूली से मामूली घर में पहुँच सकें, इस ख़्याल से हमने इनका मूल्य बहुत कम रक्खा है। इस सीरीज़ में हम ग्राम-सुधार, घरेलू शिल्प, देहाती खेल, देहाती घर, मवेशियों की बीमारियाँ, किसानों की कहावतें, खाद, खेती और घरेलू इलाज आदि विषयों पर किताबें निकालेंगे। इन सभी पुस्तकों की भाषा सरल से सरल हिन्दुस्तानी रहेगी, जिससे कम पढ़े-लिखे लोग भी इनसे फ़ायदा उठा सकें। हम आशा करते हैं कि हमारी ये पुस्तकें हमारे गाँवों के लिये और हमारे किसानों के लिये बड़े काम की साबित होंगी।

प्रकाशक

विषय-सूची

किसानों के काम की बातें

बिना अस्पताल का गाँव

कई लड़के घर के सामने, नीम के पेड़ के नीचे, घर-घरौंदा खेल रहे थे। घनश्याम ने एक घर बनाया। कमल ने एक कोठी बनायी। हरी ने एक बँगला बनाया और गोविन्द ने एक गाँव बसाया।

महल्ले में घनश्याम के चाचा बेनीमाधो रहते थे। सब लड़के उन्हें चाचा कहकर पुकारते थे। उनकी उमर ७० से ज़्यादा हो चुकी थी। अब घर पर बैठे रहना, दरवाज़े की रखवाली करना और बच्चों के साथ खेलना, यही उनके काम थे।

चारों लड़कों को एक जगह खेलते देखकर बेनीमाधो भी वहाँ आ गये। गोविन्द ने कहा—चाचा जी, मैंने गाँव बसाया है।

बेनीमाधो उसका गाँव देखने लगे।

गोविन्द ने कहा—देखिये, मेरे गाँव की सड़कें और गलियाँ ज़रूरत के मुताबिक़ चौड़ी, और सीधी हैं और कंकड़ कूट-पीट-कर पक्की कर दी गई हैं। हरएक गली और सड़क के दोनों ओर पानी के निकलने की नालियाँ बना दी गई हैं। गाँव के बीचोबीच एक खुली हुई और काफ़ी लम्बी चौड़ी फुलवाड़ी है। फुलवाड़ी के बीच में बैठका है। इस बैठके में पंच लोग बैठेंगे और गाँव के झगड़े निपटायेंगे।

बेनीमाधो बड़े ग़ौर से उसका गाँव देखने लगे। गोविन्द ने आगे कहना शुरू किया—यह देखिए, पेशेवालों के महल्ले अलग-अलग हैं। गाँव के किनारे पर एक लम्बा-चौड़ा मैदान चौरस कर दिया गया है और उस पर घास लगाई गई है। यहाँ सुबह-शाम बच्चे खेलेंगे। हरएक महल्ले में एक-एक पक्का कुआँ है।

अब इधर आइये। गाँव के पूरब ओर लड़के-लड़कियों के लिये यह दो स्कूल हैं।

अब ज़रा घरों को देखिये। हरएक घर साफ़-सुथरा, देखने में सुन्दर और अच्छी बनावट का है। हवा और रोशनी के लिए हरएक घर में काफ़ी खिड़कियाँ और दरवाज़े हैं। हरएक घर में सोने की कोठरियाँ, बैठक, रसोईघर और दालान अलग-अलग हैं। हरएक घर में नहाने के लिए एक पक्की कोठरी अलग है। हरएक घर में एक आँगन भी है, जिसमें एक

किनारे फूल की क्यारी है और जिसमें हर मौसम में सुन्दर-सुन्दर फूल खिले रहेंगे।

रसोईघर का पानी बड़ी नाली में ले जाने के लिये हरएक घर के पिछवाड़े पक्की नालियाँ हैं। अब बताइये इस गाँव में और क्या कमी है?

बेनीमाधो ने कहा—अस्पताल कहाँ है?

गोविन्द ने कहा—हमारे गाँव में कोई बीमार होगा ही नहीं।

गोविन्द की बुद्धि देखकर बेनीमाधो बहुत चकित हुए। उन्होंने प्यार से कहा—बेटा, ऐसा अच्छा गाँव बसाने की बात तुमको किसने बतायी?

गोविन्द ने जवाब दिया—कल शहर से गाँव में हेल्थ-आफ़िसर साहब आये थे। वे मेरे पिताजी से गाँव और घरों की सफ़ाई के बारे में बातचीत कर रहे थे। मैंने उनकी बातें सुन लीं और आज मैंने एक ऐसा नया गाँव बसा दिया जिसमें अस्पताल की ज़रूरत ही नहीं है।

बेनीमाधो ज़ोर-ज़ोर से पुकारने लगे—रमाशङ्कर, ओ रमाशङ्कर, यहाँ आकर देखो, तुम्हारे बेटे ने नया गाँव बसाया है।

रमाशङ्कर गोविन्द के बाप का नाम था। बेनीमाधो की आवाज़ सुनकर रमाशंकर वहाँ गये और गोविन्द का नया गाँव

देखकर वे भी बहुत खुश हुए।

बेनीमाधो ने कहा—अगर मैं ऐसे गाँव में बसा होता तो इतनी जल्दी बुड्ढा न होता।

गोविन्द ने कहा—अब बस जाइये।

बेनीमाधो और रमाशंकर हँसते हुये चले गये।

हल

खेती के लिये हल बड़ी ज़रूरी चीज़ है। हल के बिना खेती की ही नहीं जा सकती। हल से जितनी गहरी जोताई होती है, उतनी ही खेत की पैदावार बढ़ जाती है।

सब तरह के अनाजों के लिये खेत की एक-सी जोताई की ज़रूरत नहीं होती। किसी को कम जोतना पड़ता है, किसी को ज़्यादा। जैसे गेहूँ और जौ के लिये खेत में कई बार हल से गहरा जोतने की ज़रूरत होती है; पर चना, मटर और अरहर वाले खेत को जौ-गेहूँ के खेत से कम जोतना पड़ता है।

हिन्दुस्तान में बहुत पुराने ज़माने से एक ही क़िस्म का हल काम में लाया जा रहा है। लेकिन आजकल ख़ास-ख़ास तरह की जोताई के लिये कई क़िस्म के हल तैयार किये गये हैं, जिनके इस्तेमाल से खेत की पैदावार पहले। से कई गुनी बढ़ जाती है।

दूमट ज़मीन के लिये मेस्टन हल बहुत फ़ायदेमन्द है। इसके इस्तेमाल से गेहूँ की पैदावार देसी हल के मुक़ाबले में फ़ी बीघा तीन-चार मन ज़्यादा होती है।
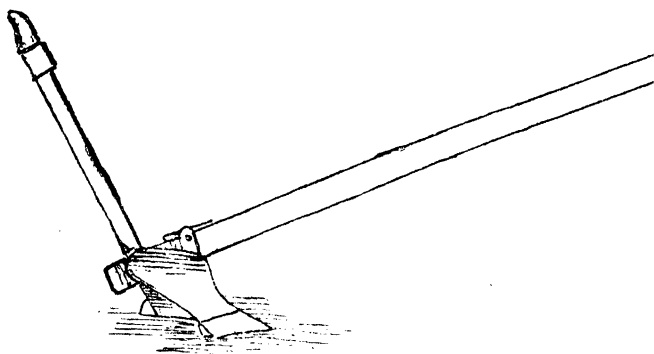
मेस्टन हल

वाट्स हल मेस्टन हल से बड़ा होता है और छः इञ्च गहरी और पाँच इञ्च चौड़ी कूँड़ बनाता है।
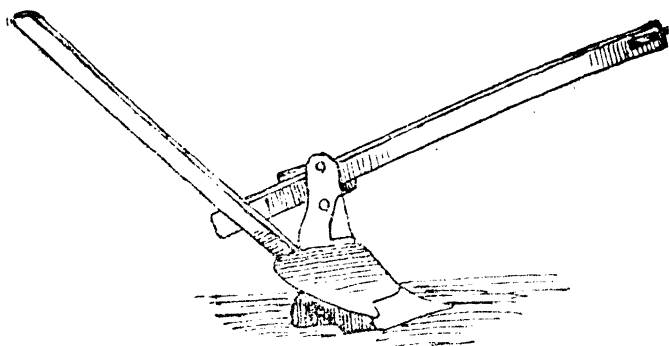
वाट्स हल

मानसून हल कड़ी और मटियार जगहों में अच्छा काम देता है; लेकिन उसके खींचने के लिये ज़्यादा ताक़तवर बैलों की ज़रूरत पड़ती है।
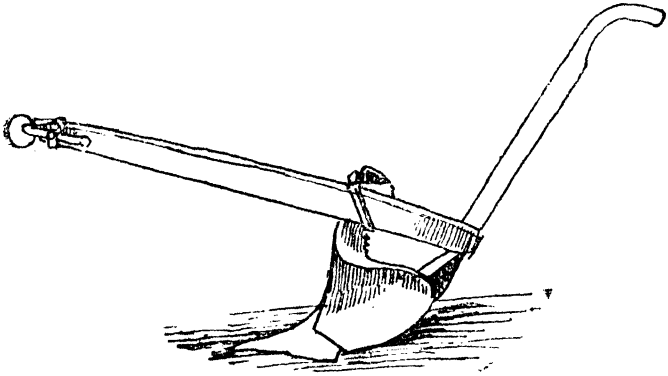
मानसून हल

पंजाब हल मानसून हल से बड़ा होता है। उससे आठ इञ्च चौड़ी और छः इञ्च गहरी कूँड़ बनती है।
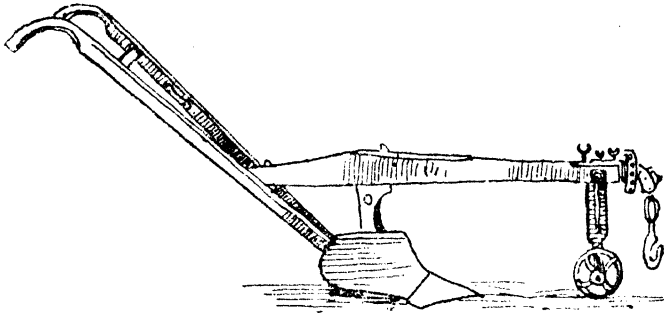
पंजाब हल

ए० टी० और सी० टी० हल मटियार ज़मीन के लिये बहुत ही मुफ़ीद साबित हुये हैं। इन हलो में यह खूबी है कि

हल चलानेवाले की मर्ज़ी पर हल के दायें या बायें मिट्टी गिरती जाती है, जिससे सारे खेत की सतह बराबर रहती है।
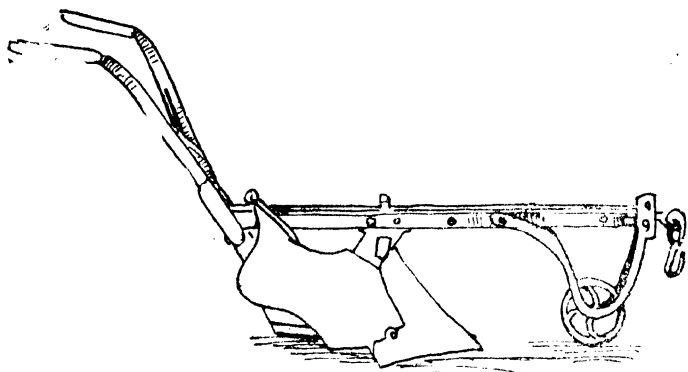
सी० टी० हल
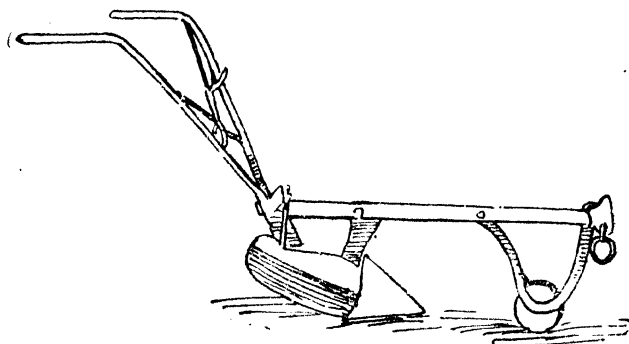
ए० टी० हल

एक हल पत्थरतोड़ कहलाता है। यह ख़ासकर सूखी

मटियार ज़मीन के लिये बनाया गया है। कपास कट जाने के बाद चैत-बैसाख में सूखी हुई कड़ी ज़मीन को जोतने में यह हल बहुत काम का साबित हुआ है।
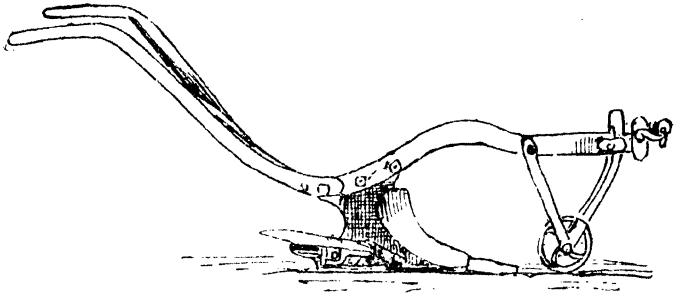
पत्थरतोड़ हल

सैबूल हल को खींचने के लिये दो जोड़ी बैलों की ज़रूरत होती है। यह हल कास के दूर करने में बहुत कारआमद साबित हुआ है।
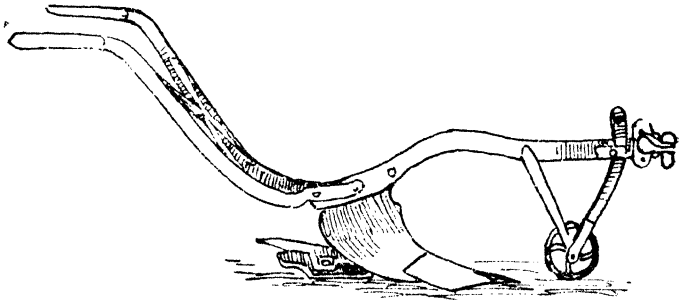
सैबूल हल

किसानों को चाहिये कि जैसी फ़सल बोवें, उसी के अनुसार हल भी रक्खें। सरकार के खेती के महकमे से इन हलों के बारे में बहुत सी बातें मालूम की जा सकती हैं। खेती के महकमे का दफ्तर क़रीब क़रीब हर एक ज़िले में होता है।

ग़रीबी कैसे बढ़ती है ?

लतीफ़—बाबा ! मैं यह चमकीला कपड़ा लूँगा।

रहीम—बेटा ! यह अपने मुल्क का बना हुआ नहीं है।

लतीफ़—तो क्या हुआ ?

रहीम—बेटा ! इससे ग़रीबी बढ़ती है।

लतीफ़—कैसे ?

रहीम—अच्छा, समझो। तुम्हारे पड़ोसी रामलाल ने पिछले साल कपास बोया था। उसने कपास से रुई निकाली और रुई बाज़ार में दी। रुई उसने छः आने सेर बेंची होगी। पिछले साल यही भाव था। फिर वह ग़ैर मुल्क को गई। तुम बता सकते हो, कैसे गई होगी ?

लतीफ़—रेल और जहाज़ पर चढ़कर गई होगी।

रहीम—अच्छा, रेल का और जहाज़ का भाड़ा तो उस पर लगा ही होगा।

लतीफ़—ज़रूर। मुफ़्त में उसे कोई क्यों ढोवेगा ?

रहीम—अच्छा, उस पर रेल और जहाज़ का भाड़ा लदा। जहाँ गई, वहाँ के कारख़ाने तक पहुँचते-पहुँचते वहाँ के कुलियों का भी कुछ ख़र्च लदा ही होगा ?

लतीफ़—क्यों नहीं ?

रहीम—फिर वह साफ़ की गई, धुनी गई, काती गई, उसके कपड़े बने, कपड़े धोये गये, रँगे गये, सुखाये गये, उन पर उनके नाम और नम्बर छापे गये, तह किये गये, फिर उनकी गाँठें बाँधी गईं; क्या इन सब कामों में कुछ खर्च न लगा होगा ?

लतीफ़—लगा क्यों न होगा ?

रहीम—फिर वह रुई कपड़ा बनकर रेल पर बैठी और रेल से जहाज़ पर आई; जहाज़ पर चढ़कर बम्बई, कलकत्ते या कराँची पहुँची। वहाँ से फिर रेल पर बैठी और तुम्हारे गाँव में आगई। अब उसका कितना दाम होगया ?

लतीफ़—कितना हुआ ?

रहीम—बजाज से पूछो। यह धोती का एक पल्ला है। उठाकर देखो तो वज़न में कितना होगा ?

लतीफ़—एक सेर से कम तो न होगा।

रहीम—इसका दाम बजाज एक रुपया बता रहा है। रुई बेंचने के बाद ही रामलाल ने धोती खरीदी थी। तुम बताओ, उसे कितना पैसा अधिक देना पड़ा होगा ?

लतीफ़—दस आने।

रहीम—ये दस आने उसने कहाँ से दिये होंगे ?

लतीफ़—वह सरसों, गुड़, गेहूँ, जौ वग़ैरह भी तो पैदा करता है; उन्हीं को बेंचकर दिया होगा।

रहीम—पर तुम तो अब समझ गये कि छः आने की रुई बेंचकर वह दो-चार महीने बाद उसी रुई को कपड़े की सूरत में एक रुपये में खरीदेगा तो उसके घर में ग़रीबी को जगह मिल जायगी न ?

लतीफ़—हाँ, मिल तो जायगी। पर वह रुई को घर में रखकर क्या करता ?

रहीम—फ़ुरसत के वक़्त में चरखे से सूत कातता और अपने महल्ले के करीम जुलाहे से कपड़ा बुनवा लेता तो कम से कम अपनी उसी रुई के लिये उसे वह दस आने पैसे तो न देने पड़ते, जो रुई को दूसरे मुल्क में जाने और वहाँ से कपड़े बनकर लौटने में लग जाते हैं। और उसका फ़ालतू वक़्त भी तो फ़ज़ूल न जाता।

लतीफ़—करीम क्या मुफ़्त में बुन देता ?

रहीम—यह सही है कि मुफ़्त में न बुन देता, पर रेल और जहाज़ का किराया और सैकड़ों मज़दूरों की लम्बी मज़दूरी भी तो उस पर न लदती और रामलाल के एक पड़ोसी जुलाहे करीम बेचारे की रोज़ी भी तो चलती।

लतीफ़—और करीम को जब ग़ल्ले की ज़रूरत होती तो वह कपड़े की बुनाई के बदले में मुमकिन है, ग़ल्ला ही ले लेता।

रहीम—तब तो रामलाल के नगद पैसे भी बच जाते।

लतीफ़--पर चरखे के सूत का कपड़ा तो बड़ा मोटा और खुरदरा होता है।

रहीम—खुरदरा है तो क्या बुरा है। मन को समझा लो, तो खुरदरा ही अच्छा लगने लगेगा। तुम्हारा शौक़ ही तो ग़रीबी को पालता है।

लतीफ़--बाबा! मुझे तो रामलाल का छः आने लेकर उतनी ही रुई का एक रुपया देना खल रहा है। उसे अपनी रुई का यहीं कपड़ा बनवा लेना चाहिये था।

रहीम—बेटा! ऐसे न जाने कितने रामलाल इस मुल्क में भरे पड़े हैं। अगर सब एक साथ यह सोच लें कि अपनी रुई पर हम अपने ही मुल्क के मज़दूरों और रेलवे और जहाज़ की कम्पनियों का बोझ लदने देंगे, तो ग़रीबी की जड़ सूख जाय और हमारा मुल्क फिर पनप उठे।

लतीफ़—बाबा! हमें अपने ही मुल्क की चीज़ें काम में लानी चाहियें।

रहीम—बेटा! आज ही से शुरू करो।

मच्छर

हिन्दुस्तान में मलेरिया से जितनी जानें जाती हैं, उतनी प्लेग, हैज़ा या इन्फ़्लुएन्ज़ा वग़ैरह किसी दूसरी बीमारी से नहीं। मलेरिया मच्छरों से पैदा होता है। एक छोटा-सा कीड़ा आदमियों का कितना बड़ा दुश्मन है, यह बात तुम जानोगे तो बड़ा ताज्जुब करोगे।

दूसरे कीड़ों की तरह मच्छर की भी शुरू से आख़ीर तक चार सूरतें होती हैं, यानी अंडा, इल्ली, केंचुल (शङ्खी) और आख़िरी मच्छर का रूप। मादा मच्छर अण्डे के लिये मैला या कीचड़वाला पानी पसन्द करती है। पत्ते के टुकड़े या किसी दूसरी चीज़ पर, जो पानी में तैरती हैं, मादा अगली टाँगों के बल खड़ी होकर सूरज निकलने से पहले दो-तीन सौ अन्डे एक साथ दे देती है। यह अंडे एक दूसरे के साथ चिपके रहते हैं। अगर हवा के झोंके या और किसी सबब से अण्डों की डोंगी पानी में उलट जाय, तो अण्डे गोता खाकर ऊपर तैरने लगते हैं। अंडे देकर मादा उन्हें छोड़ देती है और फिर उनकी खोज ख़बर नहीं लेती। फिर वह दूसरे मुक़ाम पर अण्डे देती रहती है।

चौबीस घण्टे के बाद हरएक अण्डे के नीचे के एक हिस्से

से इल्ली निकलती है। उसका मुँह पानी में उल्टा हुआ रहता है, लेकिन साँस लेने के लिये उसकी दुम में एक नली-सी रहती है, जो पानी के ऊपर निकली रहती है।

कुछ घंटों के अन्दर पानी में बहुत-सी इल्लियाँ हो जाती हैं। ये इल्लियाँ पैदा होते ही बहुत जल्दी बढ़ने लगती हैं और चार-पाँच घंटों ही में उनकी सूरत-शकल में अजीब तबदीलियाँ हो जाती हैं। दस दिन तक इल्ली इसी हालत में रहती है। पानी में जो कुछ खाने की चीज़ें मिल जाती हैं, उन्हीं पर वे अपना गुज़र करती हैं। साफ़ पानी में उन्हें ख़ोराक नहीं मिलती। इसी से मादा मच्छर ख़ासकर गंदे पानी या कीचड़ में अंडे देती हैं। फिर धीरे-धीरे वह एक केंचुल में बन्द हो जाती है। साँस लेने के लिये उसमें से दो नलियाँ निकल आती हैं, जो पानी के ऊपर रहती हैं। वह चार-पाँच दिनों तक इसी हालत में रहती है। इतने वक़्त में वह इल्ली बदलकर मच्छर निकल आता है। बाहर निकलते ही वह पानी के ऊपर आता है और अपने परों को सुखाकर हवा में उड़ जाता है।

इसके बाद तो वह रात में जानदारों को कितना हैरान करता है, यह तुमसे छिपा नहीं होगा।

मच्छर से बचने की ख़ास यही तदबीर है कि घर या बस्ती के आसपास पानी जमा होने और सड़ने न दिया जाय। अगर किसी वजह से नालियों और गढ़ों में पानी जमा हो जाय, तो

उस पर हफ़्ते में एक बार थोड़ा-सा मिट्टी का तेल डाल देना चाहिये। ऐसा करने से इल्लियाँ मर जायँगी और फिर मच्छर पैदा न होंगे। यह काम ख़ासकर फागुन और असाढ़ के महीनों में होना चाहिये, जब मच्छर अंडे देते हैं।

मक्का की खेती

मक्का की खेती के लिये हिन्दुस्तान की ज़मीन बड़ी ही मुवाफ़िक़ है। थोड़ी-सी कोशिश से भी किसान इसकी खेती करके बहुत फ़ायदा उठा सकता है। यह खरीफ़ और रबी दोनों फसलों में हो सकती है। यह ७०-८० दिनों में तैयार हो जाती है, इससे उसी खेत में दूसरी फ़सल भी बोई जा सकती है।

मक्का हिन्दुस्तान में अमेरिका से आया। अमेरिका में इसकी पैदावार में बड़ी तरक्क़ी की गई है। हमारे यहाँ मक्के का पौधा आठ-दस फ़ीट से ज़्यादा लम्बा बढ़ जाता है। यहाँ मक्के के एक पौधे में दो-तीन से अधिक भुट्टे नहीं लगते; लेकिन अमेरिका में हरएक पौधे में आठ-नौ भुट्टे तक लगते हैं। इसका सबब यह है कि अमेरिका के मक्के की पैदावार बढ़ाने के बारे में नई-नई खोजें की गईं; उसके लिये नई-नई खादें तैयार की गईं और बोने के वक़्त और तरीक़े में भी ज़रूरी सुधार किये गये।

मक्के की क़िस्में तीन होती हैं—पीली, सफ़ेद और लाल।

पीले रङ्ग की मक्का के दाने बड़े-बड़े, देखने में सुन्दर और एक दूसरे से ख़ूब सटकर मिले हुये होते हैं।

सफ़ेद रङ्ग की मक्का के दाने भी बड़े-बड़े होते हैं। लाल और पीली की बनिस्बत यह खाने में मीठी होती है।

लाल रङ्ग की मक्का की पैदावार कम होती है और वह पीली और लाल मक्का के मुक़ाबले में घटिया समझी भी जाती है।

मक्का की खेती के लिये वह ज़मीन ज़्यादा पसन्द की जाती है, जो ऊँची हो और जिसमें रेत का हिस्सा ज़्यादा होता है। नीची ज़मीन में, जिसमें पानी भरा रहता है, पैदावार कम होती है।

मक्का की खेती बरसात में होती है। इससे होशियार किसान बरसात शुरू होने के पहले ही खेत को दो-तीन बार गहरा जोत-कर और उसमें खाद डालकर तैयार रखते हैं। खाद के लिये गोबर, बकरी की मींगनी, मैला, धान की भूसी, लकड़ी की राख, चूना, शोरा, रेंड़ और बिनौले की खली बहुत मुफ़ीद हैं।

बोने से पहले अच्छे-अच्छे बीज छाँट लेने चाहिये। और उन्हें अगर पहले गाय या भैंस के पेशाब में भिगोकर तब बोया जाय, तो उसमें अँकुवे भी जल्द निकलते हैं और कोई रोग भी नहीं लगता।

अगर सिंचाई का माकूल इन्तज़ाम हो, तो बीज को मई में नहीं तो बरसात शुरू होते ही बो देना चाहिये। देर करने से पैदावार अच्छी न होगी।

हरएक बीज को सावधानी के साथ डेढ़ या दो फुट के

फ़ासले पर बोना चाहिये। नज़दीक के पौदे कमज़ोर होते हैं और उनमें भुट्टे कम लगते हैं।

मक्का के साथ उड़द, कपास और ककड़ी भी मिलाकर बोने का रिवाज है। पंजाब में मक्का के साथ कपास बोकर अच्छा नतीजा निकाला गया है। अगर मक्का के साथ कपास बोना हो, तो एक लाइन में मक्का और दूसरी लाइन में कपास, इस सिलसिले से बोना अच्छा है।

मक्के के लिये पानी न ज़्यादा चाहिये, न कम, इसलिये सिंचाई के बारे में सदा ख़बरगीरी रखनी चाहिये। बरसात का पानी खेत में जमा न हो, इसके लिये नालियाँ बना रखनी चाहिये और बरसात देर में पड़े, तो कुएँ से सिंचाई कर देनी चाहिये।

मक्का के पौधे जब दो-तीन इञ्च ऊँचे हो जायँ, तब निराई करा देनी चाहिये। निराई कम से कम चार बार करानी चाहिये और इससे भी ज़्यादा कराई जायगी, तो पैदावार अच्छी ही होगी।

भुट्टे जब पक जायँ, तब खेत को काट लेना चाहिये और सूखने के लिये उन्हें धूप में फैला देना चाहिये। सूख जाने के बाद पौधों से भुट्टे तोड़कर अलग कर लेने चाहिये और उनपर से पत्तियाँ हटाकर उन्हें फिर धूप में अच्छी तरह सुखा लेना चाहिये। गीले भुट्टे सड़ जाते हैं। वे न तो आदमी के काम के रहते हैं, न जानवरों ही के।

फुलवाड़ी

हरएक सभ्य मुल्क में मकानों और बँगलों के आसपास छोटे-छोटे बग़ीचे लगाने का शौक़ बढ़ रहा है। बग़ीचे से उनकी शोभा ही नहीं बढ़ती, बल्कि उनमें रहनेवालों के स्वभाव पर भी उनका असर पड़ता है और वे थोड़ी देर भी बग़ीचे में घूम-फिरकर या उसमें बैठकर शरीर और मन की थकावट और बेचैनी से छुटकारा पा लेते हैं।

बग़ीचे में कौन-सा फूल या पौधा कहाँ लगाना चाहिये और कौन-सी लता कहाँ उठाई जानी चाहिये, इसकी अच्छी जानकारी हुये बिना अच्छी फुलवाड़ी नहीं लगाई जा सकती। कुछ फूल या पौधे गमलों में लगाये जाते हैं। ऐसे गमले कहाँ रक्खे जायँ, इसकी भी जानकारी आवश्यक है।

फूलों और पौधों के बीज को पहले एक स्थान में बो देना चाहिये। उनपर फूस का छप्पर बनाकर छाया भी कर देनी चाहिये। ऐसे स्थान को अँग्रेज़ी में 'नर्सरी' कहते हैं।

जब पौधे उग आयें और कुछ बड़े होकर मज़बूत हो जायँ, तब उन्हें सावधानी से उठा-उठाकर क्यारियों में, जो पहले ही से तैयार रक्खी जायँ, लगा देना चाहिये।

नर्सरी में पानी उतना ही दिया जाना चाहिये, जितने से

मिट्टी गीली हो जाय। वहाँ पानी लगना नहीं चाहिये; नहीं तो बीज सड़ जायँगे।

पौधों को ज्यादातर शाम को नर्सरी से उठाना चाहिये। या बदली हो तो दिन के किसी वक्त भी वे उठाये जा सकते हैं। उठाने के पहले पानी छिड़ककर नर्सरी की ज़मीन में गाड़-कर पौधे को जड़-सहित उठा लेना चाहिये।

जहाँ पौधे को लगाना हो, उस जगह में एक गहरा गड्ढा खोदकर और उसे खाद मिली हुई बारीक मिट्टी से भरकर उसमें पानी डाल देना चाहिये। फिर पौधे को उसी में लगा देना चाहिये और उसके आसपास की मिट्टी को खूब कसकर दबा देना चाहिये, जिससे पौधा किसी तरफ़ टेढ़ा न हो जाय।

हरएक पौधे को उसके फैलाव के अनुसार दूरी पर लगाना चाहिये। एक ही क्यारी में जुदा-जुदा फैलाव के पौधे लगाना हो तो ऊँचे पौधे बीच में और छोटे पौधे क्यारी के किनारों पर लगाने चाहिये।

क्यारी की मिट्टी को कभी सूखने नहीं देना चाहिये। बीच-बीच में खुरपी से उसे खुरपियाते भी रहना चाहिये।

फूलों और फलों के पौदों को कीड़े बहुत नुक़सान पहुँचाते हैं। उनको मारने के लिये तम्बाकू का पानी, साबुन या हींग का पानी या नीम की खली का पानी बहुत कारगर होता है।

बाग़ के दुश्मन

बाग़ के पौधों के बहुत-से दुश्मन हैं, लेकिन ख़ास तीन ही हैं—फंगस, कीड़े और चिड़ियाँ।

फंगस काई की तरह के नन्हें-नन्हें पौधे होते हैं, जो फलों के पौधों पर लग जाते हैं और उन्हीं का रस चूस कर बढ़ने लगते हैं। इससे पौधे कमज़ोर पड़कर सूख जाते हैं। उनको हटाने का यह इलाज है कि दो सेर नीला थोथा लेकर बीस सेर पानी में डुबो दो। जब वह गल जाय, तब उसे तीन सेर कली के चूने में धीरे-धीरे डालो; जब कुल पानी चुक जाय, तब दोनों को हिलाकर अच्छी तरह मिला दो। फिर उसमें चाक़ू डुबोकर देखो। अगर चाक़ू पर दाग़ आ जाय, तो थोड़ा चूना और मिला दो। जब दाग़ न पड़े, तब समझ लो कि दवा तैयार हो गई। उस दवा को फंगस पर डालोगे, तो वह मर जायगा।

पेड़ों के पत्तों और फलों पर तरह-तरह के कीड़े हमला करते हैं। जिन पौधों में वे लगते हैं, उनके पत्तों और डाल के रंग से उनका रंग ऐसा मिलता-जुलता होता है कि कीड़ों को खोज निकालना मुश्किल होता है। खूब ग़ौर से देखकर कीड़ों का पता लगाओ। पहले तो उन्हें पकड़कर मार डालना या मिट्टी

में दबा देना चाहिये। फिर उस पौधे को साबुन के पानी से नहला देना चाहिये। या तमाखू को २४ घंटे पानी में भिगोकर फिर उसे आधे घंटे तक आग पर उबालो। फिर ठंडा करके दोनों हाथों से उसे ख़ूब मसल डालो और कपड़े से छान लो। यह दवा सब तरह के कीड़ों को मार सकती है।

नीम की खली का पानी देने से दीमक मर जाते हैं।

चींटियाँ भी पौदों को नुक़सान पहुँचाती हैं। उनको रोकने के लिये पौदों के आसपास पिसी हुई हल्दी डाल देनी चाहिये।

चिड़ियों में कौवे ताज़े पौदों के अँकुवे खा जाते हैं। एक कौवे को मारकर बाग़ में टाँग देने से फिर दूसरे कौवे वहाँ नहीं आयेंगे।

गिलहरी, चमगादड़ और चूहे भी कम ख़तरनाक नहीं होते। मूँगफली के दानों को नीले थोथे के पानी में २४ घण्टे भिगोकर खेत के इधर-उधर डाल देना चाहिये। चूहे और गिलहरी उन्हें खाकर मर जायँगे।

घरेलू मक्खियाँ

जब आदमी दुनिया में पैदा होता है, सबसे पहले उसका परिचय मक्खी ही से होता है और ज़िन्दगी भर उससे उसका सम्बन्ध बराबर बना रहता है। तो भी मामूली आदमी उसके बारे में बहुत कम जानता है।

कुछ लोगों ने बड़ी मेहनत से मक्खियों के बारे में बहुत-सी नई बातों का पता लगाया है। उनसे मालूम हुआ है कि मक्खियाँ केवल हमको सतातीं ही नहीं, वे हमारी तन्दुरुस्ती भी खराब करती हैं।

खाने-पीने के मामले में मक्खी कुछ भी परहेज़ नहीं करती। दूध-दही या मलाई उसको उतनी ही अच्छी लगती है, जितनी क़ै, थूक, कफ़ या पाखाना। वह उसी शौक़ के साथ मिठाई के थाल पर भिनभिनाती है, जैसे कि क़ै या थूक पर। वह अक्सर हमारे सब खाने की चीज़ों को पसन्द करती है और बेधड़क उन सब पर आ बैठती है।

मक्खी के खाने का ढङ्ग भी अजीब होता है। उसका मुँह हाथी की सूँड़ की तरह होता है। वह उससे खाने को सिर्फ़ पी सकती है। वह मच्छरों की तरह किसी चीज़ को छेदकर नहीं खा-पी सकती।

तब वह शक्कर, मिठाई और थूक आदि ठोस चीज़ों को कैसे खाती है ? वह पहले एक तरह की गीली चीज़ उगलकर ठोस चीज़ों को घोल लेती है और फिर उस घोल को पी जाती है। खाने की जिस चीज़ पर मक्खी बैठती है, उस पर वह बराबर कै किया करती है।

जैसे खाने के बाद गाय-बैल जुगाली करते हैं, वैसे ही मक्खी भी पेट भर खा चुकने के बाद अपना खाना उगलकर फिर पिया करती है।

मक्खी के छः टाँगें होती हैं। जब वह किसी चीज़ पर उतरती है, तब छहो टाँगों के सहारे खड़ी होती है। उसकी टाँगों पर छोटे-छोटे कड़े बाल होते हैं। देखने में वे छोटे-छोटे ब्रश ऐसे मालूम होते हैं। जब वह किसी नम और गन्दी चीज़ पर बैठती है, तब उसकी छहो टाँगें उसमें सन जाती हैं और वह चीज़ उसकी टाँगों में बहुत देर तक लगी रहती है। इसी तरह मक्खी का मुँह भी गन्दी चीज़ों से सना रहता है।

मक्खियाँ हर प्रकार की सड़ी-गली और नम चीज़ों पर अंडे देती हैं। घोड़े की लीद में मक्खियाँ बहुधा अण्डे देती हैं। आदमी और जानवरों के पाखाना-पेशाब, पुराने चिथड़े, सड़ी हुई तरकारियों, गले हुये फलों, सड़े हुये मांस वग़ैरह चीज़ों पर मक्खी अण्डे देती रहती है।

मक्खी प्रायः मार्च से अण्डे देना आरम्भ करती है और

अक्टोबर तक देती रहती है। जाड़ों में भी गर्म स्थानों में, जैसे रसोई-घर आदि में मक्खी अण्डे देती है। एक मक्खी एक बार में १२० अण्डे देती है और अपनी छोटी-सी ज़िन्दगी में चार बार अण्डे देती है।

मक्खी दस दिनों में अपनी पूरी सूरत में पहुँच जाती है। गर्म देशों में आठ ही दिन लगते हैं।

जाड़े में बहुत-सी मक्खियाँ मर जाती हैं। इस मौसम में वे केवल रसोई-घर, हलवाई की दूकान और गन्दी जगहों ही में ज़्यादा पाई जाती हैं।

मक्खी कितनी दूर उड़ सकती है? इसका ठीक-ठीक जवाब देना मुश्किल है; क्योंकि हवा, वर्षा, शहर और गाँव, खेत या जङ्गल या पहाड़, इन सब का मक्खी के उड़ने की ताक़त पर असर पड़ता है। अगर हवा उसके अनुकूल हुई तो वह बहुत दूर तक उड़ सकती है; परंतु हवा के विरुद्ध वह बहुत कम दूर तक उड़ सकती है। इसी प्रकार वर्षा में भी वह नहीं उड़ सकती; क्योंकि पानी से उसके पर भीग जाते हैं। पहाड़ों को वह पार नहीं कर सकती; क्योंकि वह इतना ऊँचा नहीं उड़ सकती। खेत या जङ्गलों को पार करना उसके लिए असम्भव है; क्योंकि वहाँ उसको आहार नहीं मिलता। हाँ, नगर या गाँवों को वह बड़ी आसानी से पार कर जाती है; क्योंकि वहाँ उसके खाने की सामग्री बहुतायत से पाई जाती है।

मक्खी उड़कर बीमारी को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाती है। हमको अपने घरों, खाने-पीने की चीज़ों और कपड़े आदि में बहुत सफ़ाई रखनी चाहिये, जिससे वे मक्खियों के अड्डे न बन सकें।

मड़ाई और ओसाई

फ़सल तैयार हो जाने पर किसान उसे काटकर एक जगह पर जमा कर देता है, उसे खलियान कहते हैं। किसी चौरस ज़मीन पर गोबर से लीपकर खलियान रक्खा जाता है। कुछ लोग खेत ही में खलियान रख लेते हैं, कुछ अपने मकान के के सामने की खुली हुई जगह में और कुछ किसी बाग़ में आम के पेड़ के नीचे रखते हैं।

खलियान में अनाज के पूले इस तरह रक्खे जाते हैं कि उनकी बालें तो अन्दर की तरफ़ रहती हैं और जड़ें बाहर की तरफ़। जब पूले सूख जाते हैं, तब उन्हें खोलकर एक गोल घेरे में फैला दिया जाता है। उसमें बालें अन्दर की तरफ़ रहती हैं। उसे 'पैरी' कहते हैं।

फिर उसपर दो या तीन बैल एक साथ जोतकर चलाये जाते हैं। बैलों के खुरों से अनाज के डंठल टूटते जाते हैं और बालों से दाने अलग होते जाते है। इस काम को दौंरी या दायँ चलाना कहते हैं।

जैसे-जैसे डंठल टूटते जाते हैं, वैसे-वैसे किसान उसपर दूसरे पूले डालता जाता है। जब सब पूले टूट जाते हैं, दाना डंठल से बिल्कुल अलग हो जाता है और डंठल का भूसा बन

जाता है, तब किसान दौरी चलाना बन्द कर देता है।

जिस दिन हवा का रुख़ अच्छा होता है; और उसकी तेज़ी भूसे को उड़ाने के लिये काफ़ी होती है, उस दिन किसान

ओसाना

दाँये हुये अनाज को दौरी में भर-भरकर, अपने कन्धे से ऊपर

उठाकर, ज़मीन पर गिराता जाता है और हवा भूसे को उड़ा कर दूर गिराती जाती है। दाना भूसे से भारी होने के कारण नहीं उड़ता और एक जगह जमा होता जाता है। इस काम को ओसाना कहते हैं।

जब लगातार कई दिनों तक तेज़ हवा नहीं चलती और किसान को अनाज या भूसे की जल्दी ज़रूरत होती है, तब वह दो आदमियों को एक लंबा-चौड़ा कम्बल या दोहर पकड़ा-कर अपने पीछे खड़ा कर लेता है। वे दोनों आदमी हाथों से कम्बल या दोहर के दोनों कोने पकड़कर ज़ोर-ज़ोर से झटका देते हैं, जिससे हवा का झोंका तैयार होता है और किसान उसी झोंके में ओसा लेता है।

कई अनाज ऐसे हैं, जिनको दाँने या ओसाने की ज़रूरत नहीं पड़ती। जैसे, धान के पौधों को खाँची या तख्ते पर पीटकर उनसे दाना अलग किया जाता है। मक्के के भुट्टों को एक दूसरे रगड़कर दाना निकाला जाता है। बाजरे की बालों को डंडे से पीटकर दाना अलगाया जाता है।

योरप और अमेरिका में मड़ाई और ओसाई का काम कलों से लिया जाता है। इससे वहाँ काम भी जल्द हो जाता है और खर्च भी कम पड़ता है। पर ऐसी कलें छः-सात हज़ार रुपये से कम में नहीं मिलतीं। इससे इस मुल्क का ग़रीब किसान तो उनसे फ़ायदा उठा ही नहीं सकता।

बाँस

बाँस घास की क़िस्म का एक पौधा है। इसकी सैकड़ों क़िस्में होती हैं। आमतौर से बाँस २० फ़ीट से लेकर १२० फ़ीट तक ऊँचा और ४ इञ्च से लेकर ८ इञ्च तक मोटा होता है। छोटे से छोटा बाँस घास के बराबर होता है। और बड़े से बड़ा बाँस १७० फ़ीट ऊँचा और २० इञ्च मोटा होता है।

बाँस भीतर से पोला होता है। कोई-कोई बाँस भीतर से ठोस भी होते हैं, जिनकी लाठियाँ बनती हैं।

बाँस कम ही फूलते-फलते हैं। इनका बीज चावल के बराबर होता है। बाँस के पत्ते लम्बे, पतले और हरे रंग के होते हैं। सूखने पर वे हलके पीले रंग के हो जाते हैं।

गाँवों के आसपास बग़ीचों की खाई पर अक्सर लोग बाँस लगा देते हैं। बाँस की एक कोठी या कोट में बहुत-से बाँस गँसे हुये होते हैं। कभी-कभी तो वे इतने घने हो जाते हैं कि उनके आर-पार कुछ भी दिखाई नहीं पड़ता।

इसके अलावा बाँस और भी बहुत-से कामों में आता है। उससे चारपाई की पटियाँ बनती हैं और मकान की छतें पाटी जाती हैं। किसानों के क़रीब-क़रीब सभी झोपड़े बाँसों ही से

तैयार होते हैं। खपरैलों में भी बाँस लगते हैं। छप्परों और टट्टियों में भी बाँस काम में लाये जाते हैं।

बाँस

बाँस को फाड़कर उसकी महीन तीलियों से टोकरियाँ बिनी

जाती हैं। बाँस की ये टोकरियाँ बड़ी मज़बूत और ख़ूबसूरत होती हैं। लोग बाँस की चटाइयाँ भी बिनते हैं। उसके सूप और पंखे भी बनते हैं। बाँस की ये सब चीज़ें गाँवों में बनती हैं।

बाँस बहुत मज़बूत होता है। गाँव के लोग बाँस की लाठियाँ बनाते हैं और उन्हीं के बल पर रात में निडर होकर वे अपने खेतों की रखवाली किया करते हैं। अगर कोई खतरनाक जंगली जानवर सामने आ जाता है, तो भी उन्हें अपनी लाठी पर पूरा भरोसा रहता है।

शहरवालों के लिये बाँस से कई काम की चीज़ें बन सकती हैं, और उनसे बनानेवालों को अच्छी आमदनी भी हो सकती है।

यहाँ बाँस से बननेवाली कुछ चीज़ों की तसवीरें दी जाती हैं। तुम अपने घर में भी मामूली औज़ारों की मदद से ज़रूरी काम की चीज़ें बाँस से बना सकते हो। कोशिश करके देखो। बाँस से जितना सुख आदमी को मिल सकता है, उतना तो उससे ले ही लेना चाहिये।
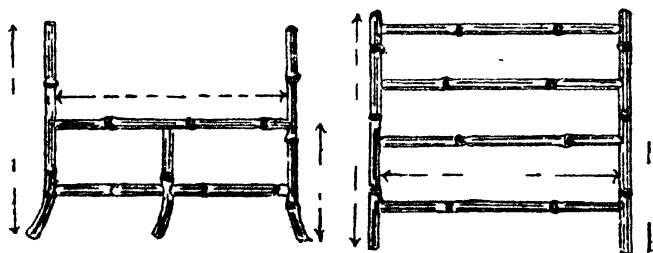
तौलिया और धोती रखने का स्टैंड

मेज़

दीवारगीर
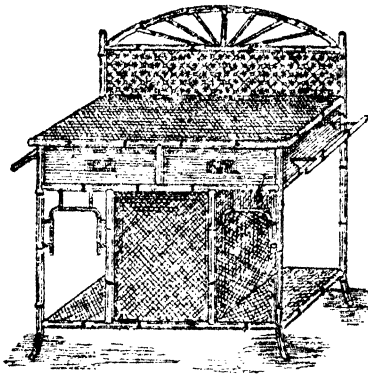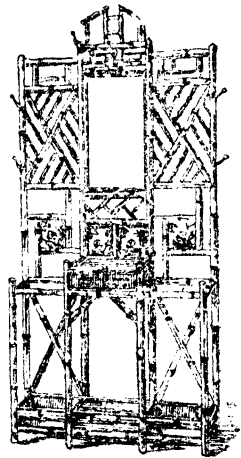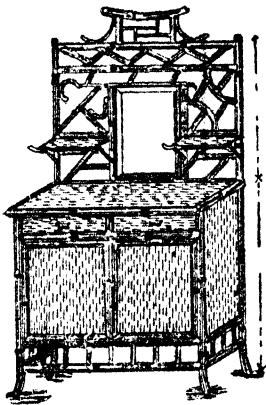
सिंगार करने का मेज़
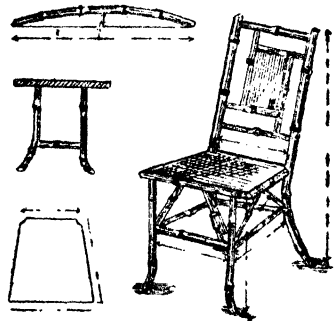
बिना हत्थे की कुरसी

देहात के काम

जाड़े के दिन थे, ठंडी-ठंडी हवा चल रही थी। गाँव के सब लोग रामदास की बैठक में बैठे हुये आग ताप रहे थे। इतने में दयाशङ्कर आया और कहने लगा कि सुना है, ग्राम-सुधार के इन्सपेक्टर साहब आये हुये हैं और रामफल के दरवाज़े पर लोगों को बहुत अच्छी-अच्छी बातें बता रहे हैं। इतना सुनते ही सब लोग इन्सपेक्टर साहब के पास जा पहुँचे और ग़ौर से उनकी बातें सुनने लगे। जब इन्सपेक्टर साहब अपनी बात खतम कर चुके, तब रामदास ने उनसे कहा:—

रामदास—साहब, जो कुछ बातें बताईं वे सचमुच हम लोगों के लिये बहुत ही फ़ायदे की हैं। मगर यह तो बताइये कि हम लोगों की बेकारी कैसे दूर हो? हम किसान लोग साल में अक्सर कई महीने बेकार रहते हैं। हम लोगों को फ़ुरसत के वक़्त के लिये कोई काम ही नहीं रहता।

इन्सपेक्टर—रामदास, अगर तुम लोग काम करना चाहो, तो उसकी कमी नहीं है। कपास बोते ही हो, उसको ओटने से जो बिनौला निकलता है, उसका तेल निकल सकता है। तेल से तो तुम लोगों को पैसे मिलेंगे ही, उसकी खली भी खाद के काम आ जायगी। इसकी ओर तुम लोगों का खयाल बिल्कुल

नहीं गया और आजतक बिनौले का ठीक-ठीक इस्तेमाल करना तुम लोगों ने नहीं सीखा।

गोविन्द—हां साहब, आपका यह कहना तो बहुत ठीक है। मगर यह काम तो थोड़े ही दिनों में खतम हो जायगा। इसके बाद हम लोग क्या करेंगे ?

इन्सपेक्टर—तुम्हारे गाँव के आसपास कितनी ज़मीन ऐसी हैं, जिनमें फसलें नहीं बोई जातीं और घास उगती हैं। अगर तुम लोग भेड़-बकरियाँ पाल लो, तो फिर तुम्हें उनसे काफ़ी फ़ायदा होगा। दूध तो काफ़ी मिलेगा ही। ऊन कातकर उसके धागों की रँगाई करके उनसे कम्बल, क़ालीन और आसनियां तैयार कर सकते हो। मिर्ज़ापुर के आसपास के लोग इससे काफ़ी फ़ायदा उठा रहे हैं। इन दिनों तो ऊन की मांग देश-विदेश सभी जगहों में बढ़ रही है।

सुखराम—बाबूजी, इस साल तो सस्ती होने की वजह से अभीतक सुतली ही नहीं बिक सकी। भला, ऊन को कौन पूछेगा ?

इंसपेक्टर—यह तो तुम्हारी ही भूल है। इन दिनों खेती का काम खतम हो चुका है। सुतली को कातकर तुम उससे काफ़ी पैसा पैदा कर सकते हो। यह कती हुई सुतली चारपाई, टाट और पर्दों के बुनने के काम आती है। शहरवाले तो इसके लिये पैसे भी काफ़ी देते हैं और चारपाई की अरदावन और

पानी खींचने की रस्सी लगभग सभी ख़रीदते हैं।

गङ्गादीन—बाबूजी, आप मुझे कोई ऐसी तरकीब बताइये कि मैं अपनी खेती ही में ऐसी चीज़ें पैदा कर लूँ, जिससे मुझे ज़्यादा पैसे मिलने लगें और वे आसानी से बिक भी जायँ।

इन्सपेक्टर—हाँ भाई, यह बात तो तुमने बहुत अच्छी पूछी। देखो, इस ज़माने में जौ और चना पैदा करके उतना रुपया नहीं पा सकते, जितना मूँगफली और मसालों की खेती से तुम्हें मिलेंगे। मिर्चा ही को ले लो। मिर्चे के एक बीज से जो पेड़ पैदा होगा, उसमें कितने मिर्चे लगेंगे? मिर्चे के पेड़ से मेरे ख़याल में तुम्हें जौ और चने के पेड़ की बनिस्बत कहीं ज़्यादा फ़ायदा होगा। किसानों को चाहिये कि वे ऐसी चीज़ों की खेती ज़्यादा करें, जो महँगी बिकती हैं।

सीतल - अच्छा बाबूजी, मेरे लिये भी कोई ऐसा काम बतलाइये, जिसमें पैसे की ज़्यादा ज़रूरत न हो; क्योंकि हम चमारों के पास पैसा नहीं है। मज़दूरी से तो पेट चलता है।

इन्सपेक्टर—भाई, तुम्हारे लिये भी तो काम काफ़ी हैं। जानते हो, इन दिनों चमड़ा आदमियों की ज़िन्दगी में काम आनेवाली चीजों में से ख़ास चीज होता जा रहा है। जहाँ देखो, वहीं इसकी ज़रूरत पड़ती है। मेरे देश से बहुत-सी कच्ची खाल दूसरे देशों को चली जाती है। तुम लोग उसके सिझाने का काम करके ख़ूब पैसे कमा सकते हो। इसकी तरफ़

से ख़याल हटा लेने की वजह से हमारे गांवों के कारबार को बड़ा भारी धक्का पहुँचा है।

इसी तरह तुम देखते होगे, जानवरों की हड्डियाँ इकट्ठी करके दूसरे मुल्कों के होशियार लोग काफ़ी मुनाफ़ा उठाते हैं और उसी हड्डी की खाद और पालिश वग़ैरह बनाकर फिर हमारे ही हाथों तिगुना-चौगुना दाम लेकर बेंचते हैं। अगर तुम चाहो, तो मैं तुम्हारे लिये हड्डी तोड़नेवाली मशीन का इन्तज़ाम कर दूँ। तुम उससे अच्छी और क़ीमती खाद तैयार कर सकोगे।

सीतल यह बातें सुनकर बहुत ख़ुश हुआ और उसने कहा—मैं कल ही से इस काम को शुरू कर दूँगा।

रहमतउल्ला—इन्सपेक्टर साहब, आपने सीतल को तो थोड़े ख़र्चे की मगर बहुत बड़े फ़ायदे की बात बताई, क्या मेरे लिये भी इसी तरह का कोई काम बताने की आप मेहरबानी करेंगे ?

इंसपेक्टर साहब—देखो, इन दिनों शहरों में मुर्ग़ी के अंडे की खपत काफ़ी बढ़ रही है। अगर तुम कुछ मुर्ग़ियाँ पाल लो, तो तुमको इससे काफ़ी पैसे मिलेंगे। हमारे देश के किसान अगर इन बातों की ओर ख़याल करने लग गये, तो सचमुच उनकी बेकारी भी दूर हो जायगी, और मालदार भी हो जायँगे।

गाँववालों के ऊपर इन्सपेक्टर साहब की बातों का काफ़ी

असर हुआ और उन लोगों ने उनकी नसीहत पर चलना शुरू कर दिया। इसका नतीजा यह हुआ कि वे लोग थोड़े ही दिनों में ख़ुशहाल होगये।

रसीद

एक दिन लालप्रताप अपने पिता के पास बैठा हुआ था। इतने में एक काश्तकार लगान लेकर आया। उसके पिता ने लगान लेकर लालप्रताप को रसीद लिख देने के लिये कहा। लालप्रताप ने कहा—पिताजी! मुझे रसीद लिखना नहीं आता। आज मैं अपने गुरुजी से रसीद लिखने का तरीक़ा ज़रूर पूछूँगा।

लालप्रताप स्कूल गया और उसने अपने गुरुजी से कहा—गुरुजी! आज पिताजी ने मुझे एक काश्तकार की रसीद लिखने के लिये कहा था; मगर मैं नहीं लिख सका। कृपा करके मुझे रसीद लिखना अच्छी तरह से समझा दीजिये।

गुरुजी ने लालप्रताप की बात सुनकर दर्जे के सब लड़कों को बुलाया और कहा—आओ लड़को! तुम लोग भी रसीद के बारे में ज़रूरी ज़रूरी बातें सीख लो।

जब दो आदमियों के बीच रुपये-पैसे या और किसी चीज़ का लेन-देन होता है, तब रसीद लिखने की ज़रूरत पड़ती है। जब कोई आदमी किसी काग़ज़ पर यह लिख देता है कि फ़लाँ चीज़, जो मुझे फ़लाँ आदमी ने दी या भेजी है, मिल गई, तब ऐसे काग़ज़ को 'रसीद' कहते हैं।

लोग रसीद इसलिये लिखवाते हैं कि किसी चीज़ के पानेवाले और देनेवाले के बीच में वह एक याददाश्त की तौर पर रहे और पानेवाला उससे इन्कार न कर सके। उसके इन्कार करने पर वही रसीद पेश की जाती है, जिसे उसने पहले लिखा था। अक्सर लोग ज़मीन के लगान, रुपयों के लेन-देन और मकान के किराये वग़ैरह के बारे में रसीद लिखवाते है।

जो रसीद ज़मींदार लोग लगान लेकर अपने काश्तकारों को देते हैं, उनमें काश्तकार का नाम, रुपयों की तादाद, रुपया लानेवाले का नाम, उस फ़सल का नाम जिसका लगान दिया गया है, रुपये पाने की तारीख़ और ज़मींदार का दस्तख़त होना बहुत ज़रूरी है। कुछ ज़मींदार रसीदें छपवाकर रख लेते हैं और कुछ ख़ुद या अपने ज़िलेदारों से लिखवाकर काश्तकार को देते हैं। यहाँ रसीद के कुछ नमूने दिये जाते हैं।

रसीद का नमूना (१)

मैं कि राजबहादुरसिंह ज़मींदार मौज़ा विश्वनाथगंज परगना व ज़िला प्रतापगढ़ का हूँ। मैंने मुबलिग़ २५) पचीस रुपया बाबत लगान खेत नम्बरी २८, २६ और ३० फ़सल ख़रीफ़ वाक़े मौज़ा सराय ताराचन्द सुखराम वल्द रामदीन क़ौम अहीर से

आज ता० १५ दिसम्बर सन् १६३५ ई० को वसूल पाया। फ़क़त।

दस्तखत

ता० १५-१२-३५ { राजबहादुरसिंह
नम्बरदार
विश्वनाथगंज, प्रतापगढ़।

यह तो हुई लगान की रसीद। अब मैं उस रसीद का लिखना बतलाऊँगा, जो रुपये के लेन-देन में लिखी जाती है।

अगर रूपये की तादाद बीस रूपये से ज़्यादा होती है, तो ऐसी रसीदों पर एक आने का टिकट भी लगाना पड़ता है। यह टिकट खास तौर से इसी काम के लिये बनाया गया है और हर एक डाकघर में मिलता है।

रसीद का नमूना (२)

मैं कि शारदाप्रसाद उर्फ बच्चा मिश्र साकिन कोटवा ज़िला इलाहाबाद का हूँ। आज ता० २७ मई, सन् १६३६ ई० को मैंने मुबलिग़ ४५०) चार सौ पचास रुपये बाबत क़ीमत सरसों व अलसी रामअधीन जीतमल साकिन हनुमानगंज ज़िला इलाहाबाद से चुकता वसूल पाया। फ़क़त।

दस्तखत

२७ मई, सन् १६३६ { (टिकट एक आना)
शारदाप्रसाद
कोटवा इलाहाबाद

इसी तरह मकान के किराये की भी रसीद लिखी जाती है। ऐसी रसीदों में मकान का नम्बर और महल्ला लिखना बहुत ज़रूरी होता है।

लालप्रताप, अब तो तुमने रसीद लिखना जान लिया होगा?

लालप्रताप ने जवाब दिया—हाँ गुरुजी, अब मैं ज़रूरत पड़ने पर अच्छी तरह रसीद लिख लूँगा।

गुरुजी ने और लड़कों से भी पूछा तो उन्होंने भी यही जवाब दिया कि वे रसीद लिखना अच्छी तरह सीख गये।

टोकरियाँ

देहात में घर-घर में टोकरियाँ पाई जाती हैं। गाँव के लोग इनमें अनाज, तरकारियाँ और फल वग़ैरह रखते हैं।

टोकरियों की बहुत-सी क़िस्में हैं। टोकरी, झाबा, झौवा, खाँचा, खाँची, चँगेरी, डलिया, मौनी, कुरुई, दौरा, दौरी, दुगला, सिकहुला वग़ैरह बहुत-से नामों की टोकरियाँ देहात में बनती हैं।

गाँव के लोग टोकरी में मिट्टी ढोते, खाद भरकर खेत में डालते, जानवरों का भूसा या कुट्टी डालते और गोबर या कंडे उठाते हैं। झाबे ज़्यादातर फलवाले खरीदकर ले जाते हैं। उनमें वे फलों को भरकर, उनका मुँह सीकर, एक स्टेशन से दूसरे को भेजते हैं। झाबों का मुँह कम चौड़ा होता है और उसके ऊपर एक ढक्कन भी रहता है। झौवे टोकरी से बड़े होते हैं। झौवों में किसान लोग छिली हुई घास भरते, खपड़े ढोते और आम वग़ैरह फ़सली फल बटोरते हैं।

घने बिने हुये झौवों में स्त्रियाँ मिट्टी लीपकर उन्हें ऐसा बना लेती हैं कि उनमें अनाज और आटा वग़ैरह भी रक्खा जाता है।
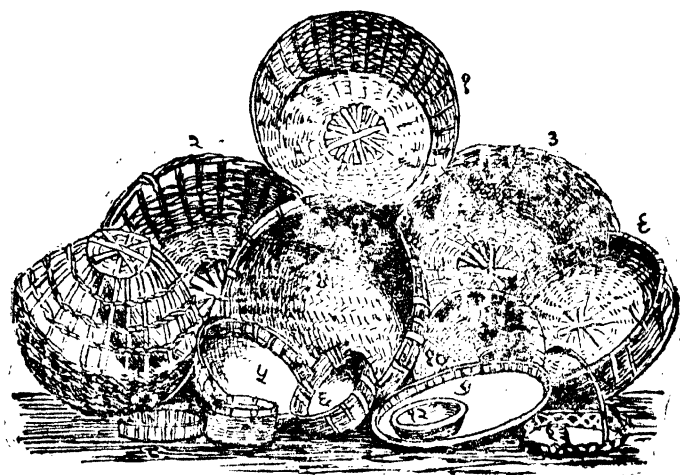
टोकरियां

खाँची घनी बिनी हुई नहीं होती। उसकी जाली बड़ी-बड़ी होती हैं। खाँची ज़्यादातर घास जमा करने या पत्ती या भूसा ढोने के काम में लाई जाती है।

खाँचा खाँची से बहुत बड़ा होता है। भड़भुँजवे बाग़ों में से पेड़ों की पत्तियाँ भाड़ में झोंकने के लिये उसमें जमा करके लाते हैं।

चँगेरी छोटी होती है और फूल चुनकर जमा करने और थोड़े फल या खाने-पीने के मामूली सामान रखने के काम में आती है। चँगेरी को हाथ में लटकाने के लिये उसमें एक

टँगना लगा रहता है। डलिया भी चँगेरी की क़िस्म की चीज़ है, लेकिन चँगेरी उससे ख़ूबसूरत बनती है।

मौनी और कुरुई मूँज की बनती हैं। गाँव की लड़कियाँ सरहरी के डंठलों से छिलके नेर लेती हैं और उन्हें पतले पतले करके सुखाकर और बल्ले बनाकर रख लेती हैं। फ़ुरसत के वक़्त वे बल्लों को पानी में भिगो लेती हैं और जब वे फूल जाते हैं, तब उन्हें कई रंगों में रंग लेती हैं। फिर उनसे वे तरह-तरह की छोटी-बड़ी रंगीन बेल-बूटेदार मौनियाँ बिनती हैं। मौनियों में गाँव की औरतों की कारीगरी देखते ही बनती है। कुरुई छोटी मौनी को कहते हैं। वह बच्चों के काम की होती है। गाँव के लोग मौनी में चबेना चबाते और उसमें रखकर भिखमंगों को भीख देते हैं।

गाँव की स्त्रियाँ मूँज और कास से और भी कई चीज़ें बनाती हैं, जैसे पनडब्बे, कपड़े रखने के पेटारे, घुनघुने वग़ैरह। मौनी से बड़ा सिकहुला होता है जिसमें कई पंसेरी आटा या अनाज रक्खा जा सकता है। गाँव की स्त्रियों को अगर बताया जाय, तो वे मूँज, सींक और कास से छोटे-छोटे सूट-केस, पान-सुपारी के लिये तश्तरियाँ, फल रखने के लिये चौकोर थाल और चिट्ठी-पत्री, क़लम-दवात और चाक़ू, काग़ज़ और छोटी-मोटी कितनी ही चीज़ें रखने के लिये छोटे-छोटे ख़ूबसूरत बक्स बना सकती हैं।

दौरा, दौरी और दुगला बाँस को छीलकर उसकी पतली-तहें निकाल ली जाती हैं और उनसे दौरे-दौरियाँ बिने जाते हैं। बीच-बीच में बाँस की तीलियाँ भी दी जाती हैं, जिनसे दौरे मज़बूत हो जाते हैं। दौरी-दौरे आटा, दाल, चावल वग़ैरह बारीक पिसे हुये या छोटे दानेवाले अनाज रखने के काम में आते हैं। दुगला सिंचाई के लिये पानी उलीचने के काम में आता है।

टोकरा, टोकरी, खाँचा, खाँची, झावा और झौवा अरहर के डंठल के बनते हैं। पहले अरहर के डंठलों को पानी में २४ घंटे तक भिगो रखते हैं। जब वे मुलायम और लचकदार हो जाते हैं, तब मोटे और पतले अलग-अलग चुन लिये जाते हैं। खाँचे और खाँचियाँ मोटे डंठलों के और टोकरी वग़ैरह पतले डंठलों के बनते हैं।

चाहे टोकरी हो, चाहे टोकरा, हरएक का पहले पेंदा ही बनाया जाता है। फिर उसे चारोंओर से सिरे तक बिनते चले जाते हैं।

दौरा, दौरी, दुगला और डलिया बाँस के छिलकों के बनते हैं। बाँस की टोकरियाँ टिकाऊ होती हैं और अरहर के डंठलों से बनी हुई टोकरियों की बनिस्बत ज़्यादा सफ़ाई से बनाई भी जाती हैं।

देहात में अडूसे के डंठलों से भी टोकरियाँ बनाई जाने

लगी हैं। इसी तरह शीशम की टहनियों से भी टोकरियाँ बन सकती हैं।

गाँवों में छोटे-बड़े सभी घरों की लड़कियाँ और औरतें सींकों और सरकंडों से पंखे, घुनघुने और छोटी-छोटी तश्तरियाँ बनाया करती हैं और उनमें रङ्गीन तागों से रङ्ग-बिरङ्ग के बेल-बूटे बनाती हैं। देहात की ऐसी चीज़ें अगर शहरों में लाई जायँ, तो वे धनी आदमियों के हाथों अच्छे दामों पर बिक सकती हैं, और अगर विलायत भेजी जाया करें, तो वहाँ उनके और भी ज़्यादा दाम मिलें, और देहात का यह रोज़गार जो अभीतक सिर्फ़ शौक़ के लिये है, अच्छी आमदनी का कारण भी बन जाय।

कहीं-कहीं बेंत की टोकरियाँ भी बनती हैं, जो सींक,
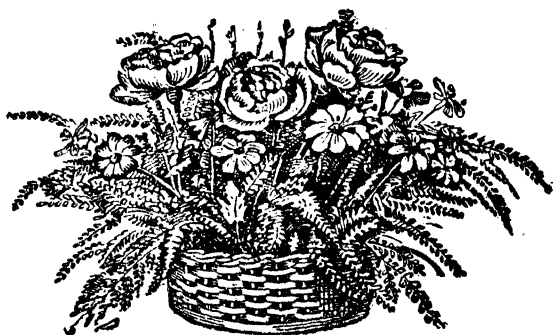
चँगेरी

सरकंडे, डंठल और बांस की चीज़ों से कहीं ज़्यादा टिकाऊ और

सुन्दर होती हैं। उनके दाम भी ज़्यादा मिलते हैं। उन्हें ख़ास-कर मालदार आदमी ख़रीदते हैं। बेंत की चँगेरिया भी बनती हैं, जिनमें फूल रखकर सजाये जाते हैं।

कहीं-कहीं लोग काग़ज़ को पानी में सड़ाकर उसे कूटते और जब उसकी लुगदी बन जाती है तब उसे किसी लोटे या या घड़े की पेंदी पर रखकर फैला लेते हैं और धूप में सुखा लेते हैं। शौक़ीन स्त्रियाँ उसपर मनमाना रङ्ग भी चढ़ा लेती हैं। काग़ज़ की टोकरियाँ साफ़, सुन्दर और मज़बूत होती हैं।

टोकरी बनाने और बेंचने का कारबार देहात में फ़ायदे के साथ चलाया जा सकता है। गाँवों की स्त्रियों और लड़कियों को शहरवालों के पसन्द की शकलें दिखाकर अगर टोकरियाँ बनवाई जायँ और फिर उन्हें ख़रीदकर अच्छे मुनाफ़े पर शहरों में बेंचा जाय तो उनकी अच्छी खपत हो सकती है।

रस्सी

रस्सी बड़े काम की चीज़ है। शायद ही कोई ऐसा घर होगा, जिसमें रस्सी की ज़रूरत न पड़ती हो। खेती का काम तो बिना रस्सी के चल ही नहीं सकता। कुयें से पानी भरने और जानवरों को बाँधने के लिये भी रस्सी बहुत ही ज़रूरी चीज़ है। छोटे-बड़े सभी के काम आनेवाली चारपाई भी इसीसे बनती है।

रस्सियाँ कई चीज़ों से बनाई जाती हैं—सन, सुतली, सूत, कास, मूँज और नारियल की जटायें खासतौर से रस्सी बनाने के काम आती हैं।

पेटुआ और सनई खेत से काटकर लाते हैं और किसी तालाब या गड्ढे में रखकर पानी में डुबो रखने के लिये उसके ऊपर से मिट्टी रख देते हैं। तीन-चार दिनों तक अच्छी तरह सड़ने के बाद उसे धोकर निकाल लेते हैं। ऐसा करने से रेशे आसानी से अलग हो जाते हैं। इन्हीं रेशों को सन और सुतली कहते हैं। सन या सुतली के रेशों को आपस में बटकर रस्सी तैयार करते हैं। रस्सी जितनी ही बटी जायगी, उतनी ही मज़बूत होगी। ऐसी रस्सियाँ ज़्यादा दामों में बिकती हैं; क्योंकि ज़्यादा टिकाऊ होती हैं।

सबसे ज़्यादा मज़बूत रस्सी नारियल के जटे की होती है।

और रस्सियाँ पानी पड़ने से ख़राब होती हैं, मगर इसकी रस्सी भीगने से और भी मज़बूत होती है। जहाज़ो में वा जहाँ मज़बूत रस्सी की ज़रूरत होती है, इसी की रस्सी इस्तेमाल की जाती है।

सूत की रस्सी देखने में ख़ूबसूरत तो ज़रूर लगती है; लेकिन ज़्यादा मज़बूत नहीं होती। उसमें और रस्सियों से दाम भी ज़्यादा ख़र्च करना पड़ता है।

सूत की रस्सी तो योंही काफ़ी चिकनी रहती है। मगर मूँज और सुतली या सन वग़ैरह की रस्सियों को पतले बाँस को कूटकर मुलायम करके उसीसे ख़ूब माँजते हैं। ऐसा करने से रस्सी के उभड़े हुये रेशे कट जाते हैं। किसान रस्सी में काफ़ी ऐंठन डालकर उसे मज़बूत करने के लिये एक तरह की चरखी का इस्तेमाल करते हैं।

सन और सुतली तो क़रीब-क़रीब सभी किसान अपने खेतों में पैदा कर लेते हैं। मूँज भी उन्हें नालों या खेत की ऊँची मेंड़ों पर उगे हुये सरपत से मिल जाती है। लेकिन सूत की रस्सी बाज़ार में मोल बिकती है। नारियल की पैदावार समुद्र के किनारे होती है। इसलिये इसकी रस्सियाँ ज़्यादातर बंगाल, मद्रास और बम्बई के सूबे में तैयार होती हैं।

फ़सलों की बीमारियाँ और उनके इलाज

हमारे देश के किसान अभी तक पुराने ढङ्ग से खेती करते चले आ रहे हैं। यही वजह है कि और देशों से हमारे देश में पैदावार कम होती है। पैदावार कम होने की वजह फ़सलों में कई तरह की बीमारियों का लग जाना भी है। फ़सलों की कुछ ख़ास बीमारियों का हाल और उनका इलाज नीचे लिखा जाता है। इससे किसानों को बहुत कुछ फ़ायदा होने की उम्मीद है।

ज्वार की बीमारी—कभी-कभी ज्वार के दाने में बीमारी जाने की वजह से सफ़ेद आटे की जगह काले रङ्ग का आटा निकलने लगता है। इससे बचाने के लिये बीज बोने से थोड़ी देर पहले उसे तूतिया के पानी में कम से कम दस मिनट तक डाल रखना चाहिये और इसके बाद सुखाकर उसे बो देना चाहिये। बीज ऐसा होना चाहिये जिसमें किसी बीमारी का असर न हुआ हो। जिस ज़मीन में ज्वार बोना हो, वह न तो नीची हो और न ज़्यादा उसमें तरी ही होनी चाहिये।

गेहूँ की बीमारी—वह बीमारी जो फफूँदी से पैदा होती

है, गेहूँ को बहुत ज्यादा नुक़सान पहुचाती है। अक्सर यह गेहूँ के फूलने के वक़्त लगती है। बीमारी लगे हुये पेड़ की बालियाँ काली हो जाती हैं। ऐसी बालियों को जला देना ही ज्यादा अच्छा होगा। बोने के लिये ऐसे खेत का बीज ख़रीदना चाहिये, जिसमें यह बीमारी न लगी हो।

आलू की बीमारी—आलू के ऊपर लाल रङ्ग के जो निशान बने रहते हैं, वे बीमारी की वजह से काले पड़ जाते हैं। बदली और कुहरा होने की वजह से यह बीमारी ज़्यादा होती है। पौधे, पत्ते और तनों पर असर हो जाने के बाद आलू भी सड़ कर बदबू देने लगता है। जब आलू की गाँठ पर सफ़ेद घेरे पड़ जायँ, तब समझ लो कि अब आलू सड़ने वाला है।

आलू की बोआई घनी न होनी चाहिये। बीज बोते समय छाँट लेना ज़रूरी है। सिंचाई के वक़्त पानी बहुत ज़्यादा न दिया जाय।

चने की बीमारी—चने में भी फफूँदी से बीमारी पैदा होती है। इसके धब्बे पत्तों पर गोल और पीले होते हैं, मगर कली पर इसका रङ्ग सफ़ेद होता है। जिस खेत में यह बीमारी फैलती है, उसका भूसा जानवर कम खाते हैं। खाने से उन्हें पेचिश की बीमारी भी हो जाया करती है। कई दिनों तक बादल रहने और ज़मीन की नमी की वजह से यह बीमारी फैलती है।

इसलिये मटियार और खादवाली ज़मीन में चना न बोना चाहिये। हल्की दोमट मिट्टी और पानी के निकासवाले खेत इसके लिये ज़्यादा अच्छे होते हैं।

गन्ने के रोग—कभी-कभी ज्योंही गन्ने के पौधे उगने लगते हैं, त्योंही जड़ों में कीड़े लगने शुरू हो जाते हैं और गाँसा सूख जाता है।

ऐसी हालत में पौधों को जड़ से निकालकर जला देना चाहिये। गन्ने में लाल धब्बेवाली बीमारी पैदा होने से उसकी जड़ और तने का भीतरी भाग भी लाल हो जाता है। उसका कीड़ा भी अन्दर ही मौजूद रहता है। ऐसी हालत में बीजों को होशियारी से छाँटकर बोना चाहिये।

नर्म क़िस्मवाले गन्नों को पाइरिल्ला नाम के कीड़े से बहुत ज़्यादा नुकसान पहुँचा है। यह कीड़ा पत्तियों के बीच अंडे देकर ऊपर से सफ़ेद जाली-सी मढ़ देता है। पाइरिल्ला का रङ्ग पिलाई लिये हुये भूरा होता है। यह रस को चूसता है। अप्रैल से दिसम्बर तक खूब अण्डे देता है। इसके मारने के लिये हाथ का जाल इस्तेमाल किया जाता है। एक गड्ढे में थोड़ा-सा पानी और मिट्टी का तेल डालकर उसीमें कीड़ों को जमा करके डाल देने से सब के सब मर जायँगे।

गेहूँ पर ज़ंग—इस बीमारी के हो जाने से बालियों का रङ्ग नारङ्गी रङ्ग का हो जाता है। यह बीमारी अक्सर बारिश

के बाद दिसम्बर में होती है। अगर गेहूँ पक गया है, तब तो कम नुकसान होता है और अगर कच्चा हुआ, तब तो किसान को बहुत ही घाटा सहना पड़ता है। इस बीमारी से सारा पौधा नारङ्गी रङ्ग के छोटे-छोटे धब्बों से ढक जाता है। किसान लोग इस बीमारी को गेरुई कहते हैं। इससे पौधा कमज़ोर हो जाता है। पूसा नं० १२ और ४ को यह बीमारी नुक़सान नहीं पहुँचा सकती है। गेहूँ का खेत नीचा न हो और उसमें नाइट्रोजन वाली खाद कम डालनी चाहिये। गेहूँ के खेत की जुताई ज़्यादा होनी चाहिये। अगर बोते समय ५ फ़ी सदी तूतिया के पानी और फिर चूने के पानी में ५ मिनट तक गेहूँ को हिलाकर फिर सुखाकर बोया जाय, तो बहुत ही फ़ायदा पहुँचता है। आजकल बहुत-से किसान अपनी फ़सलों की बीमारियों और उनके दुश्मनों का हाल नहीं जानते हैं। इससे न तो अच्छे क़िस्म की फ़सल ही होती है और न पैदावार ही ज़्यादा होती है।